श्रीमद् भगवदगीता – आठवाँ अध्याय

अनुक्रम

आठवें अध्याय का माहात्म्य 1
आठवाँ अध्यायः अक्षरब्रह्मयोग 2

आठवें अध्याय का माहात्म्य

भगवान शिव कहते हैं – देवि ! अब आठवें अध्याय का माहात्म्य सुनो| उसके सुनने से तुम्हें बड़ी प्रसन्नता होगी| लक्ष्मीजी के पूछने पर भगवान विष्णु ने उन्हें इस प्रकार अष्टम् अध्याय का माहात्म्य बतलाया था|

दक्षिण में आमर्दकपुर नामक एक प्रसिद्ध नगर है| वहाँ भावशर्मा नामक एक ब्राह्मण रहता था, जिसने वेश्या को पत्नी बना कर रखा था| वह मांस खाता था, मदिरा पीता, श्रेष्ठ पुरुषों का धन चुराता, परायी स्त्री से व्यभिचार करता और शिकार खेलने में दिलचस्पी रखता था| वह बड़े भयानक स्वभाव का था और और मन में बड़े-बड़े हौंसले रखता था| एक दिन मदिरा पीने वालों का समाज जुटा था| उसमें भावशर्मा ने भरपेट ताड़ी पी, खूब गले तक उसे चढ़ाया| अतः अजीर्ण से अत्यन्त पीड़ित होकर वह पापात्मा कालवश मर गया और बहुत बड़ा ताड़ का वृक्ष हुआ| उसकी घनी और ठंडी छाया का आश्रय लेकर ब्रह्मराक्षस भाव को प्राप्त हुए कोई पति-पत्नी वहाँ रहा करते थे|

उनके पूर्व जन्म की घटना इस प्रकार है| एक कुशीबल नामक ब्राह्मण था, जो वेद-वेदांग के तत्त्वों का ज्ञाता, सम्पूर्ण शास्त्रों के अर्थ का विशेषज्ञ और सदाचारी था| उसकी स्त्री का नाम कुमति था| वह बड़े खोटे विचार की थी| वह ब्राह्मण विद्वान होने पर भी अत्यन्त लोभवश अपनी स्त्री के साथ प्रतिदिन भैंस, कालपुरुष और घोड़े आदि दानों को ग्रहण किया करते था, परन्तु दूसरे ब्राह्मणों को दान में मिली हुई कौड़ी भी नहीं देता था| वे ही दोनों पति-पत्नी कालवश मृत्यु को प्राप्त होकर ब्रह्मराक्षस हुए| वे भूख और प्यास से पीड़ित हो इस पृथ्वी पर घूमते हुए उसी ताड वृक्ष के पास आये और उसके मूल भाग में विश्राम करने लगे|इसके बाद पत्नी ने पति से पूछाः 'नाथ ! हम लोगों का यह महान दुःख कैसे दूर होगा? ब्रह्मराक्षस-योनि से किस प्रकार हम दोनों की मुक्ति होगी? तब उस ब्राह्मण ने कहाः "ब्रह्मविद्या के उपदेश, आध्यात्मतत्व के विचार और कर्मविधि के ज्ञान बिना किस प्रकार संकट से छुटकारा मिल सकता है?

यह सुनकर पत्नी ने पूछाः "किं तद् ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम" (पुरुषोत्तम ! वह ब्रह्म क्या है? अध्यात्म क्या है और कर्म कौन सा है?) उसकी पत्नी इतना कहते ही जो आश्चर्य की घटना घटित हुई, उसको सुनो| उपर्युक्त वाक्य गीता के आठवें अध्याय का आधा श्लोक था| उसके श्रवण से वह वृक्ष उस समय ताड के रूप को त्यागकर भावशर्मा नामक ब्राह्मण हो गया| तत्काल ज्ञान होने से विशुद्धचित्त होकर वह पाप के चोले से मुक्त हो गया तथा उस आधे श्लोक के ही माहात्म्य से वे पति-पत्नी भी मुक्त हो गये| उनके मुख से दैवात् ही आठवें अध्याय का आधा श्लोक निकल पड़ा था| तदनन्तर आकाश से एक दिव्य विमान आया और वे दोनों पति-पत्नी उस विमान पर आरूढ़ होकर स्वर्गलोक को चले गये| वहाँ का यह सारा वृत्तान्त अत्यन्त आश्चर्यजनक था|

उसके बाद उस बुद्धिमान ब्राह्मण भावशर्मा ने आदरपूर्वक उस आधे श्लोक को लिखा और देवदेव जनार्दन की आराधना करने की इच्छा से वह मुक्तिदायिनी काशीपुरी में चला गया| वहाँ उस उदार बुद्धिवाले ब्राह्मण ने भारी तपस्या आरम्भ की| उसी समय क्षीरसागर की कन्या भगवती लक्ष्मी ने हाथ जोड़कर देवताओं के भी देवता जगत्पति जनार्दन से पूछाः "नाथ ! आप सहसा नींद त्याग कर खड़े क्यों हो गये?"

श्री भगवान बोलेः देवि ! काशीपुरी में भागीरथी के तट पर बुद्धिमान ब्राह्मण भावशर्मा मेरे भक्तिरस से परिपूर्ण होकर अत्यन्त कठोर तपस्या कर रहा है| वह अपनी इन्द्रियों के वश में करके गीता के आठवें अध्याय के आधे श्लोक का जप करता है| मैं उसकी तपस्या से बहुत संतुष्ट हूँ| बहुत देर से उसकी तपस्या के अनुरूप फल का विचार का रहा था| प्रिये ! इस समय वह फल देने को मैं उत्कण्ठति हूँ|

पार्वती जी ने पूछाः भगवन ! श्रीहरि सदा प्रसन्न होने पर भी जिसके लिए चिन्तित हो उठे थे, उस भगवद् भक्त भावशर्मा ने कौन-सा फल प्राप्त किया?

श्री महादेवजी बोलेः देवि ! द्विजश्रेष्ठ भावशर्मा प्रसन्न हुए भगवान विष्णु के प्रसाद को पाकर आत्यन्तिक सुख (मोक्ष) को प्राप्त हुआ तथा उसके अन्य वंशज भी, जो नरक यातना में पड़े थे, उसी के शुद्ध कर्म से भगवद्धाम को प्राप्त हुए| पार्वती ! यह आठवें अध्याय का माहात्म्य थोड़े में ही तुम्हे बताया है| इस पर सदा विचार करना चाहिए|

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

(अनुक्रम)

आठवाँ अध्यायः अक्षरब्रह्मयोग

सातवें अध्याय में 1 से 3 श्लोक तक भगवान ने अर्जुन को सत्यस्वरुप का तत्व सुनने के लिए सावधान कर उसे कहने की प्रतिज्ञा की| फिर उसे जानने वालों की प्रशंसा करके 27वें श्लोक तक उस तत्त्व को विभिन्न तरह से समझाकर उसे जानने के कारणों

को भी अच्छी तरह से समझाया और आखिर में ब्रह्म, अध्यात्म, कर्म, अधिभूत, अधिदैव और अधियज्ञसहित भगवान के समग्र स्वरूप को जानने वाले भक्तों की महिमा का वर्णन करके वह अध्याय समाप्त किया| लेकिन ब्रह्म, अध्यात्म, कर्म, अधिभूत, अधिदैव और अधियज्ञ इन छः बातों का और मरण काल में भगवान को जानने की बात का रहस्य समझ में नहीं आया, इसलिए अर्जुन पूछते हैं –

(अनुक्रम)

।। अथाष्टमोऽध्यायः ।।

अर्जुन उवाच
किं तद् ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम।
अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते।।1।।

अर्जुन ने कहाः हे पुरुषोत्तम ! वह ब्रह्म क्या है? अध्यात्म क्या है? कर्म क्या है? अधिभूत नाम से क्या कहा गया है और अधिदैव किसको कहते हैं?(1)

अधियज्ञ कथं कोऽत्र देहेऽस्मिन्मधुसूदन।
प्रयाणकाले च कथं ज्ञेयोऽसि नियतात्मभिः।।2।।

हे मधुसूदन ! यहाँ अधियज्ञ कौन है? और वह इस शरीर में कैसे हैं? तथा युक्तचित्तवाले पुरुषों द्वारा अन्त समय में आप किस प्रकार जानने में आते हैं? (2)

श्रीभगवानुवाच
अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यातममुच्यते।
भूतभावोद् भवकरो विसर्गः कर्मसंज्ञितः।।3।।

श्रीमान भगवान ने कहाः परम अक्षर 'ब्रह्म' है, अपना स्वरूप अर्थात् जीवात्मा 'अध्यात्म' नाम से कहा जाता है तथा भूतों के भाव को उत्पन्न करने वाला जो त्याग है, वह 'कर्म' नाम से कहा गया है|(3)

अधिभूतं क्षरो भावः पुरुषश्चाधिदैवतम्।
अधियज्ञोऽहमेवात्र देहे देहभृतां वर।।4।।

उत्पत्ति विनाश धर्मवाले सब पदार्थ अधिभूत हैं, हिरण्यमय पुरुष अधिदैव हैं ओर हे देहधारियों में श्रेष्ठ अर्जुन ! इस शरीर में मैं वासुदेव ही अन्तर्यामी रूप से अधियज्ञ हूँ |(4)

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति सं मद् भावं याति नास्त्यत्र संशयः।।5।।

जो पुरुष अन्तकाल में भी मुझको ही स्मरण करता हुआ शरीर को त्याग कर जाता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूप को प्राप्त होता है – इसमें कुछ भी संशय नहीं है|(5)

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद् भावभावितः।।6।।

हे कुन्तीपुत्र अर्जुन ! यह मनुष्य अन्तकाल में जिस-जिस भी भाव को स्मरण करता हुआ शरीर का त्याग करता है, उस उसको ही प्राप्त होता है, क्योंकि वह सदा उसी भाव से भावित रहा है|(6)

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम्।।7।।

इसलिए हे अर्जुन ! तू सब समय में निरन्तर मेरा स्मरण कर और युद्ध भी कर| इस प्रकार मुझमें अर्पण किये हुए मन-बुद्धि से युक्त होकर तू निःसंदेह मुझको ही प्राप्त होगा|(7)

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन्।।8।।

हे पार्थ ! यह नियम है कि परमेश्वर के ध्यान के अभ्यासरूप योग से युक्त, दूसरी ओर न जाने वाले चित्त से निरन्तर चिन्तन करता हुआ मनुष्य परम प्रकाशरूप दिव्य पुरुष को अर्थात् परमेश्वर को ही प्राप्त होता है|(8)

कविं पुराणमनुशासितार-
मणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः।
सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूप-

मादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।।9।।
प्रयाणकाले मनसाचलेन
भक्तया युक्तो योगबलेन चैव।
भ्रूवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक्
स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।।10।।

जो पुरुष सर्वज्ञ, अनादि, सबके नियन्ता, सूक्ष्म से भी अति सूक्ष्म, सबके धारण-पोषण करने वाले, अचिन्तयस्वरूप, सूर्य के सदृश नित्य चेतन प्रकाशरूप और अविद्या से अति परे, शुद्ध सच्चिदानन्दघन परमेश्वर का स्मरण करता है, वह भक्तियुक्त पुरुष अन्तकाल में भी योग बल से भृकुटी के मध्य में प्राण को अच्छी प्रकार स्थापित करके, फिर निश्चल मन से स्मरण करता हुआ उस दिव्यरूप परम पुरुष परमात्मा को ही प्राप्त होता है।(9,10)

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति
विशन्ति यद्यतयो वीतरागाः।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति
तत्ते पदं संग्रहेण प्रवक्ष्ये।।11।।

वेद के जानने वाले विद्वान जिस सच्चिदानन्दघनरूप परम पद को अविनाशी कहते हैं, आसक्तिरहित संन्यासी महात्माजन जिसमें प्रवेश करते हैं और जिस परम पद को चाहने वाले ब्रह्मचारी लोग ब्रह्मचर्य का आचरण करते हैं, उस परम पद को मैं तेरे लिए संक्षेप में कहूँगा।(11)

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च।
मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम्।।12।।
ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्।।13।।

सब इन्द्रियों के द्वारों को रोक कर तथा मन को हृदयदेश में स्थिर करके, फिर उस जीते हुए मन के द्वारा प्राण को मस्तक में स्थापित करके, परमात्मसम्बन्धी योगधारणा में स्थित होकर जो पुरुष ॐ इस एक अक्षररूप ब्रह्म को उच्चारण करता हुआ

और उसके अर्थस्वरूप मुझ निर्गुण ब्रह्म का चिन्तन करता हुआ शरीर को त्याग कर जाता है, वह पुरुष परम गति को प्राप्त होता है।(12,13)

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्युक्तस्य योगिनः।।14।।

हे अर्जुन ! जो पुरुष मुझमें अनन्यचित्त होकर सदा ही निरन्तर मुझ पुरुषोत्तम को स्मरण करता है, उस नित्य-निरन्तर मुझमें युक्त हुए योगी के लिए मैं सुलभ हूँ, अर्थात् मैं उसे सहज ही प्राप्त हो जाता हूँ।(14)

मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम्।
नाप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः।।15।।

परम सिद्धि को प्राप्त महात्माजन मुझको प्राप्त होकर दुःखों के घर तथा क्षणभंगुर पुनर्जन्म को नहीं प्राप्त होते ।(15)

आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन।
मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते।।16।।

हे अर्जुन ! ब्रह्मलोक सब लोक पुनरावर्ती हैं, परन्तु हे कुन्तीपुत्र ! मुझको प्राप्त होकर पुनर्जन्म नहीं होता, क्योंकि मैं कालातीत हूँ और ये सब ब्रह्मादि के लोक काल के द्वारा सीमित होने से अनित्य हैं।(16)

सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः।।17।।

ब्रह्मा का जो एक दिन है, उसको एक हजार चतुर्युगी तक की अवधिवाला और रात्रि को भी एक हजार चतुर्युगी तक की अवधिवाला जो पुरुष तत्त्व से जानते हैं, वे योगीजन काल के तत्व को जानने वाले हैं(17)

अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके।।18।।

सम्पूर्ण चराचर भूतगण ब्रह्मा के दिन के प्रवेशकाल में अव्यक्त से अर्थात् ब्रह्मा के सूक्ष्म शरीर से उत्पन्न होते हैं और ब्रह्मा की रात्रि के प्रवेशकाल में उस अव्यक्त नामक ब्रह्मा के सूक्ष्म शरीर में लीन हो जाते हैं।(18)

भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते।
रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्यहरागमे।।19।।

हे पार्थ ! वही यह भूतसमुदाय उत्पन्न हो-होकर प्रकृति के वश में हुआ रात्रि के प्रवेशकाल में लीन होता है और दिन के प्रवेशकाल में फिर उत्पन्न होता है।

परस्तस्मात्तु भावोऽव्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः।
यः स सर्वेषु भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति।।20।।

उस अव्यक्त से भी अति परे दूसरा अर्थात् विलक्षण जो सनातन अव्यक्त भाव है, वह परम दिव्य पुरुष सब भूतों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता।(20)

अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम्।
यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम।।21।।

जो अव्यक्त 'अक्षर' इस नाम से कहा गया है, उसी अक्षर नामक अव्यक्तभाव को परम गति कहते हैं तथा जिस सनातन अव्यक्तभाव को प्राप्त होकर मनुष्य वापस नहीं आते, वह मेरा परम धाम है।(21)

पुरुषः स परः पार्थ भक्तया लभ्यस्तवनन्यया।
यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम्।।22।।

हे पार्थ ! जिस परमात्मा के अन्तर्गत सर्वभूत हैं और जिस सच्चिदानन्दघन परमात्मा से यह समस्त जगत परिपूर्ण है, वह सनातन अव्यक्त परम पुरुष तो अनन्य भक्ति से ही प्राप्त होने योग्य है।(22)

यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं चैव योगिनः
प्रयाता यान्ति तं कालं वक्ष्यामि भरतर्षभ।।23।।

हे अर्जुन ! जिस काल में शरीर त्याग कर गये हुए योगीजन तो वापस न लौटनेवाली गति को और जिस काल में गये हुए वापस लौटनेवाली गति को ही प्राप्त होते हैं, उस काल को अर्थात् दोनों मार्गों को कहूँगा।(23)

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम्।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः।।24।।

जिस मार्ग में ज्योतिर्मय अग्नि-अभिमानी देवता है, दिन का अभिमानी देवता है, शुक्लपक्ष का अभिमानी देवता है और उत्तरायण के छः महीनों का अभिमानी देवता है, उस मार्ग में मरकर गये हुए ब्रह्मवेत्ता योगीजन उपर्युक्त देवताओं द्वारा क्रम से ले जाये जाकर ब्रह्म को प्राप्त होते हैं।(24)

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम्।
तत्र चान्द्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्तते।।25।।

जिस मार्ग में धूमाभिमानी देवता है, रात्रि अभिमानी देवता है तथा कृष्णपक्ष का अभिमानी देवता है और दक्षिणायन के छः महीनों का अभिमानी देवता है, उस मार्ग में मरकर गया हुआ सकाम कर्म करनेवाला योगी उपर्युक्त देवताओं द्वारा क्रम से ले जाया हुआ चन्द्रमा की ज्योति को प्राप्त होकर स्वर्ग में अपने शुभ कर्मों का फल भोगकर वापस आता है।(25)

शुक्लकृष्णे गती ह्येते जगतः शाश्वते मते।
एकया यात्यनावृत्तिमन्ययावर्तते पुनः।।26।।

क्योंकि जगत के ये दो प्रकार के – शुक्ल और कृष्ण अर्थात् देवयान और पितृयान मार्ग सनातन माने गये हैं। इनमें एक के द्वारा गया हुआ – जिससे वापस नहीं लौटना पड़ता, उस परम गति को प्राप्त होता है और दूसरे के द्वारा गया हुआ फिर वापस आता है अर्थात् जन्म-मृत्यु को प्राप्त होता है।(26)

नैते सृती पार्थ जानन्योगी मुह्यति कश्चन।
तस्मात्सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्जुन।।27।।

हे पार्थ ! इस प्रकार इन दोनों मार्गों को तत्त्व से जानकर कोई भी योगी मोहित नहीं होता| इस कारण हे अर्जुन ! तू सब काल में समबुद्धिरूप योग से युक्त हो अर्थात् निरन्तर मेरी प्राप्ति के लिए साधन करने वाला हो|(27)

वेदेषु यज्ञेषु तपुःसु चैव
दानेषु यत्पुण्यफलं प्रदिष्टम्।
अत्येति तत्सर्वमिदं विदित्वा
योगी परं स्थानमुपैति चाद्यम्।।28।।

योगी पुरुष इस रहस्य को तत्त्व से जानकर वेदों के पढ़ने में तथा यज्ञ, तप और दानादि के करने में जो पुण्यफल कहा है, उन सबको निःसंदेह उल्लंघन कर जाता है और सनातन परम पद को प्राप्त होता है|(28)

ॐ तत्सदिति श्रीमद् भगवद् गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे अक्षरब्रह्मयोगो नामाऽष्टमोऽध्याय||8||
इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद् भगवद् गीता के
श्रीकृष्ण-अर्जुन संवाद में 'अक्षरब्रह्मयोग' नामक आठवाँ अध्याय संपूर्ण हुआ|
ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ